**ओ३म्**

**‘सब मनुष्यों के पालनीय सत्य धर्म का निश्चय और असत्य मतों का त्याग’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्य संसार की सर्वोत्तम कृति है। मनुष्य से बढ़कर संसार की कोई रचना नहीं है। इस मान्यता व सिद्धान्त को प्रायः सभी लोग निर्विवाद रूप से स्वीकार करते हैं। इस संसार में विद्यमान अपौरुषेय रचनाओं पर विचार करने पर बुद्धि असमंजस में पड़ जाती है। इस संसार व जगत का आधार क्या है? संसार के सभी मनुष्य इस प्रश्न का अपनी अपनी बुद्धि, ज्ञान व योग्यता के अनुसार उत्तर देंगे जिनमें कुछ उत्तर समान व अनेकों के भिन्न भिन्न हो सकते हैं। वेदों में तो इन प्रश्नों के उत्तर मिलते ही हैं, परन्तु यदि वेदों को न जानने वाले लोग दर्शन ग्रन्थ ही पढ़ ले तो उन्हें विदित होगा कि जिस सत्ता से यह संसार व इसके सभी पदार्थ जिसमें मनुष्य आदि सभी प्राणी भी सम्मिलित हैं, उत्पन्न हुए हैं, जो इस संसार का उत्पत्तिकर्त्ता, पालनकता, संचालनकर्त्ता तथा यथासमय संहार-प्रलयकर्ता है, उसे ईश्वर कहते हैं। वैशेषिक दर्शन में ईश्वर के विषय में बहुत तर्कसंगत व युक्तियुक्त विचार दिये गये हैं जिनसे ईश्वर के सत्य स्वरूप का निर्णय करने में सहायता मिलती है। हम सब जानते हैं कि कोई भी ज्ञान से पूर्ण रचना बिना किसी बुद्धिमान व ज्ञानी रचयिता के नहीं हुआ करती है। संसार में ऐसा एक भी जड़ व चेतन पदार्थ, सत्ता वा प्राणी नहीं है, जो स्वमेव, बिना अन्य किसी की सहायता के, बना हो। अतः रचना के लिए रचयिता की आवश्यकता अपरिहार्य होती है। रचना दो प्रकार की होती है। एक जो मनुष्यों व इतर प्राणियों के द्वारा होती है और दूसरी वह जिसे मनुष्य व अन्य कोई प्राणी स्वमेव नहीं कर सकते। संसार में जड़ व चेतन दो प्रकार के पदार्थ विद्यमान हैं जिन्हें जड़ व चेतन नाम से सभी जानते हैं। जड़ पदार्थ में ज्ञान, बुद्धि व चेतन तत्व न होने के कारण यह स्वयं विचार नहीं सकते और न स्वमेव कुछ उपयोगी बनते हैं। इनकी सहायता से मनुष्य व अन्य प्राणी अपने प्रयोजन व अपने स्वाभाविक एवं नैमित्तिक ज्ञान के आधार पर रचनायें करते हैं। मनुष्य पहाड़, नदी, नाले, वृक्ष, वनस्पति वा सूर्य, चन्द्र व ब्राह्मण्ड के अन्य पिण्डों को उत्पन्न वा उनकी रचना नहीं कर सकते। यह कार्य जो मनुष्यों व अन्य किन्हीं प्राणियों के द्वारा सम्भव नहीं है, यह अपौरुषेय सत्ता के द्वारा किया जाता है और उसी सत्ता को ईश्वर, परमेश्वर, जगतपति, सृष्टिकर्ता, संसार का राजा, न्यायाधीश, आचार्य व गुरु आदि नामों से जाना जाता है। यह समस्त संसार उस परमेश्वर की ही रचना है। जिस प्रकार एक कवि कविता वा काव्य की रचना करता है, उसी प्रकार से यह जगत वा संसार ईश्वर रूपी कवि का काव्य है। ईश्वर के विषय में हम महर्षि दयानन्द जी के विचारों से अवगत कराना चाहते हैं जो वेद, दर्शन, उपनिषदों व अन्य आर्ष ग्रन्थों पर आधारित हैं। वह लिखते हैं कि **‘ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।’** विचार करने पर ईश्वर का यह स्वरूप ही सत्य, यथार्थ, तर्क व युक्तिसंगत, ज्ञान व विज्ञान से पुष्ट तथा निर्भ्रान्त सिद्ध होता है। इसके विपरीत मत-मतान्तरों में जो कुछ कहा व बताया जाता है वह सत्य व यथार्थ न होकर असत्य वा मिथ्या ही प्रायः होता है।

पूर्व पंक्तियों में हमने संसार व इसके रचयिता के बारे में विचार किया है। अब हम संसार के विभिन्न प्राणियों के विषय में विचार करते हैं। मनुष्य भी अन्य प्राणियों की तरह एक प्राणी है। मनुष्य जड़ पदार्थ न होकर एक जड़ शरीर वाला प्राणी है जिसमें एक ससीम, अणु परिमाण वाला चेतन तत्व जिसे आत्मा व जीवात्मा कहा जाता है, विद्यमान है। विचार करने पर यह भी ज्ञात होता है कि सभी शरीरों में भिन्न भिन्न आत्मायें हैं जिसका कारण सभी मनुष्यों के विचारों व क्रियाकलापों में अन्तर होना है। विचार, चिन्तन व विवेचन करने व शास्त्रों के प्रमाणों के अनुसार सभी प्राणियों में जो चेतन पदार्थ के रूप में जीवात्मा हैं, वह सब अस्तित्व व सत्ता की दृष्टि समान हैं। यदि अन्तर है तो उनके अतीत के कर्मों व गुण, कर्म व स्वभावों के कारण हैं। यदि जीवात्मा के स्वरूप पर विचार करें तो वह चिन्तन व विचार तथा शास्त्रों के वर्णन के अनुसार चेतन पदार्थ, अल्पज्ञ, एकदेशी, ससीम, अनादि, अमर, अविनाशी, अजर, नित्य, जन्म-मरण धर्मा, उपासना आदि साधनों व मनसा, वाचा, कर्मणा पवित्रता व ईश्वर प्रणिधान द्वारा मोक्ष को प्राप्त होकर असीम सुख भोगता है। मनुष्य व अन्य प्राणियों के रूप में उनकी यह मोक्ष की यात्रा है। जो जीवात्मा मनुष्य योनि को प्राप्त होकर ज्ञान की खोज व प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होता है उसका अन्तिम मुकाम वेद व वैदिक ज्ञान ही होता है जिससे वह इस संसार व अपनी आत्मा को यथार्थ रूप में जानकर वैदिक-कर्मोपासना व ईश्वरोपासना अथवा विद्या आदि से ईश्वर का साक्षात्कार कर जीवनमुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त करता है। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष ही जीवन के चार मुख्य व प्रमुख लक्ष्य हैं। भोजन, धन, परिवार, निवास व यात्रा के साधन कार, वायुयान, रेलगाड़ी आदि मोक्ष की जीवनयात्रा के साधन हैं, साध्य नहीं हैं। साध्य तो ईश्वर की प्राप्ति व उसके द्वारा मोक्ष की प्राप्ति ही हैं। जो मनुष्य जीवन में अपने इस साध्य को जान लेता है और इसके अनुरूप ही जीवनयापन वा कर्म करता है, वह ही वस्तुत मनुष्य, आर्य, साधक, योगी व धार्मिक पुरुष होता है। अन्यों को मनुष्य वा धार्मिक पुरुष आदि के रूप में जानना व मानना हमारी दृष्टि में दोषपूर्ण व अनुचित हैं।

ईश्वर व जीवात्मा के विषय में हमने कुछ चर्चा की व जीवन के लक्ष्य मोक्ष का भी उल्लेख किया है। मोक्ष क्या है, यह भी जान लेते हैं। हम सब जानते हैं कि हमारा मनुष्य आदि किसी भी प्राणी योनि में जन्म हो, हमें पूर्ण सुख व आनन्द की उपलब्धि वा प्राप्ति नहीं होती वा हो सकती है। शरीर का धर्म ही वृद्धि व ह्रास एवं क्षय को प्राप्त होना है। शरीर को स्वास्थ्य की अनेक अवस्थाओं से गुजरना होता है जिसमें अनेक प्रकार के दुःख भी आते हैं। त्रिविध दुःख जो कि आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक दुःख कहलाते हैं, वह सभी प्राणियों में समय समय पर आते जाते रहते हैं। इन दुःखों से मनुष्य क्लेश को प्राप्त होता है और इसके साथ अभिनिवेश क्लेश के रूप में मृत्यु का दुःख हर क्षण हर पल उसके साथ रहता ही हैं। मृत्यु कभी भी आ सकती है और कारण कुछ भी बन सकता है। कई लोग तो जन्म के कुछ समय बाद ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। ऐसे भी हैं जो गर्भ में ही अनेक कारणों से मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। हमने देखा है कि महर्षि दयानन्द ने संसार का उपकार व सभी लोगों का कल्याण करने की दृष्टि से कार्य किया परन्तु उन्हें लोगों ने अनेक बार विष दिया और अन्त में वह विरोधियों के षडयन्त्रों का शिकार हो गये। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि हमारा किसी भी योनि में जन्म होगा तो हमें दुःख अवश्य ही आयेंगे। इनसे बचने के लिए प्रयत्न करना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। जिन कर्तव्यों का पालन करने से मनुष्य को जन्म मरण से अवकाश मिलता है वह सभी कर्म धर्म संज्ञक होते हैं। ऐसा ही शास्त्रों व ऋषियों का कथन है। मोक्ष में जीवात्मा जन्म व मरण से मुक्त होकर बिना जन्म लिये ईश्वर के सान्निध्य से सुदीर्घ अवधि 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों तक सुख व आनन्द को भोगता है और इस अवधि में उसका जन्म नहीं होता। इसी के लिए हमारे सभी ऋषि, योगी व महापुरुष अतीत काल में प्रयत्न करते रहे हैं। महर्षि दयानन्द ने इसे अत्यन्त सरल व सुबोध वा सुलभ बना दिया है। सत्यार्थप्रकाश और उनके अन्य ग्रन्थों को पढ़कर मोक्ष का स्वरूप व उसके साधनों का ज्ञान प्राप्त कर यथोचित साधना करने से साध्य व लक्ष्य मोक्ष की ओर बढ़ा जा सकता है व उसे प्राप्त किया जा सकता है।

धर्म उसे कहते हैं जिससे मनुष्य के जीवन में अभ्युदय नाम से जानी जाने वाली यथार्थ उन्नति हो और मृत्यु के बाद निःश्रेयस अर्थात् मोक्ष प्राप्त होता है। इसका अर्थ है कि इस जन्म में भौतिक व सामाजिक उन्नति करते हुए मोक्ष का भी ध्यान रखना है। मोक्ष प्राप्ति के जो विघ्न हैं, उन्हें जानकर उन कर्मों से बचना है। यदि हम असत्य का व्यवहार करेंगे तो निश्चित ही मोक्ष में बाधक होगा। ईश्वर सत्यस्वरूप है। वह असत्य को पसन्द नहीं करता। असत्य कर्म पाप कर्म कहलाते हैं जो सामाजिक व्यवस्था सहित ईश्वर से भी दण्डनीय होते हैं। ईश्वरीय दण्ड का अर्थ है मनुष्यों वा प्राणियों को दुःखों की प्राप्ति। इसीलिए मनु जी ने मनुस्मृति में मनुष्यों को समझातें हुए कहा है कि **‘‘धर्म जिज्ञासानां प्रमाणं परमं श्रुति”** अर्थात् धर्म की जिज्ञासा होने पर जिज्ञासु को उसका समाधान वेद से करना चाहिये। धर्म किसी मनुष्य की निजी शिक्षाओं व मान्यताओं का नाम नहीं है। आज कल देश व संसार में जितने भी धर्म नाम से मत प्रचलित हैं, वह सब मनुष्यों द्वारा प्रारम्भ किये गये हैं। मनुष्य अल्पज्ञ होता है अतः सर्वांश में असत्य से रहित सत्य का ज्ञान न तो उसे होता है और न ही वह दूसरों को करा सकता है। इसके अतिरिक्त ऋषि व योगीजनों से इतर कोटि के महापुरुष कहे जाने वाले अपने धर्माचार्यों का उनके अनुयायियों द्वारा चाहे कितना भी प्रचार कर लिया जाये, चाहे संसार में उनके करोड़ों व अरबों अनुयायी भी क्यों न बन जायें वा हों, तथापि वह अल्पज्ञ मनुष्य ही थे और उनमें अविद्या व अज्ञान सहित काम, क्रोध, लोभ, मोह, इच्छा व द्वेष आदि भी रहे थे। हो सकता है कि किसी महापुरुष में कम हों व किसी में अधिक, परन्तु मनुष्य व महापुरुष होकर भी इनसे बचा नहीं जा सकता। इसके लिये तो मनुष्य को वेदों का विद्वान,योगी व ऋषि होना परमावश्यक है। ऐसे केवल हमारे प्राचीन ऋषि व लगभग डेढ़ शताब्दी पूर्व महर्षि दयानन्द जी ही हुए हैं। महर्षि दयानन्द ने ईश्वरीय ज्ञान चार वेद यथा ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद का संस्कृत व आर्यभाषा हिन्दी में सरल भाष्य व व्याख्यान किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने हिन्दी में सत्यार्थप्रकाश, ऋवेदादिभाष्यभूमिका और आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थ भी दिये हैं। उनके ग्रन्थों को वेदों के व्याख्यान वा सत्य को उद्घाटित करने वाले धर्म ग्रन्थ कह सकते हैं। संसार में वैदिक साहित्य और ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की तुलना में जितने भी ग्रन्थ हैं उनमें प्रायः अविद्या विद्यमान है जिसका दिग्दर्शन महर्षि दयानन्द ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में किया व कराया है। अतः सत्य धर्म के ग्रन्थों की चर्चा करें तो इनमें ईश्वरीय ज्ञान वेद सहित सभी दर्शनों, उपनिषदों, वेदानुकूल व प्रक्षेपरहित मनुस्मृति सहित सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, आयोद्देश्यरत्नमाला आदि ग्रन्थ सम्मिलित किये जा सकते हैं। जो मनुष्य इन ग्रन्थों का अध्ययन कर इनके अनुकूल अपना कर्तव्य निर्धारित कर आचरण करेगा, वही सच्चा धार्मिक कहला सकता है। नाना प्रकार के ग्रन्थों के पढ़ लेने व उनका विद्वान होने से कोई धार्मिक नहीं कहला सकता अपितु वेद व वैदिक साहित्य के अनुकूल आचरण परमावश्चयक है जैसा कि श्री राम, श्री कृष्ण, प्राचीन ऋषियों, योगियों व महर्षि दयानन्द एवं उनके प्रमुख कुछ शिष्यों का था। वैदिक साहित्य के विपरीत जो ग्रन्थ हैं व उनमें जो अविद्यायुक्त कथन हैं, वह धर्म न होकर असत्य मत ही कहे जा सकते हैं जिनका त्याग किया जाना मनुष्य जीवन को लक्ष्य पर पहुंचाने के लिए अपरिहार्य है। जो ऐसा नहीं करेगा वह इस जन्म में आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से भले ही कुछ सुखी व समृद्ध हो जाये परन्तु शास्त्राध्ययन यह बताता है कि वह कालान्तर में इस जन्म में भी दुःख पा सकता है और भावी जन्म उसके इस जन्म के शुभ व अशुभ कर्मों के अनुसार होंगे जिसमें उसे अपने पापों के दुःख भोगने के लिए निकृष्ट प्राणी योनियों में भी जाना पड़ सकता है। हम इस लेख द्वारा सभी बन्धुओं को यही प्रेरणा करेंगे कि दूसरे अविद्याग्रस्त लोगों को देखकर स्वयं का जीवन उनके अनुकूल न बनायें और इस जन्म व भावी जन्मों में उन्नति वा मोक्ष की प्राप्ति के लिए ऋषि दयानन्द के जीवन व सिद्धान्तों को जानकर उसका अनुकरण एवं अनुसरण करें। हमने सत्य धर्म का निश्चय करने और असत्य मतों का त्याग करने के विषय में जो लिखा है वह सत्शास्त्रों के अध्ययन वा अपने विवेक से लिखा है। इसमें पक्षपात नहीं है। इसको मानना या न मानना सभी मनुष्यों का अपना अधिकार है। हम जैसे कर्म व आचरण करेंगे, कम से कम वैसा व उतना वा कुछ अधिक ही भरेंगे। इसे इस प्रकार भी कह सकते हैं जैसा हम बोयेंगे वैसा ही काटेंगे। बबूल का पेड़ बोकर आम प्राप्ति की इच्छा नहीं करनी चाहिये। करेंगे भी तो भी आम तो मिलने से रहे। आईये, वेदाध्ययन का व्रत लें और अभ्युदय और निःेयस प्राप्ति के मार्ग के पथिक बने। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**